जैन जाति और उसके गोत्र

□ श्री बलवन्तसिंह महता

भू० पू० संसद सदस्य, रैन बसेरा, उदयपुर

जैन जाति के लिए यह कम गौरव और महत्त्व की बात नहीं है कि इस देश का नाम भारतवर्ष जैनधर्म के आदि तीर्थंकर भगवान् ऋषभदेव के बड़े पुत्र चक्रवर्ती के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसी तरह इस देश की दो प्रधान संस्कृतियाँ मानी गयी हैं जो वैदिक और श्रमण के नाम से जानी जाती हैं। वैदिक सत्यमूलक है तो श्रमण अहिंसा-मूलक। वैदिक सनातन या ब्राह्मण धर्म कहलाता है तो श्रमण वीरों का क्षात्रधर्म माना जाता है। वैदिक धर्म व संस्कृति के इस देश के बाहर से आये हुए आर्यों की होने के कारण श्रमण संस्कृति ही इस देश की मूल व आदि संस्कृति और जैनधर्म इसी संस्कृति का प्रधान अंग होने से इस देश का मूल व आदि धर्म माना गया है जिसे देश के राष्ट्रनेता पण्डित जवाहरलालजी ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'डिस्कवरी ऑफ इण्डिया' (भारत की कहानी) में खुले रूप से स्वीकार किया है। यह भी जैन जगत के लिए कर्म गर्व व गौरव की बात नहीं मानी जा सकती। जैन धर्म में परम+आत्मा=परमात्मा का निषेध नहीं है पर वह उसे सृष्टिकर्त्ता नहीं मानता। जैनधर्म का जाति-पाँति में विश्वास नहीं है किन्तु वह अपने 'कम्मेसूरा सो धम्मेसूरा' के मौलिक सिद्धान्त के अनुसार जैनधर्म को वीरों का धर्म मानने के कारण क्षात्रत्व को धर्मपालना में महत्त्व ही नहीं देता अपितु प्राथमिकता भी देता है। जैन धर्म के आध्यात्मिक क्षेत्र के प्रवेश में जाति, पाँति, वर्ण आदि पर कोई रोक नहीं है पर तीर्थ की स्थापना करने वाले तीर्थंकरों के क्षत्रियकुल में जन्म होने की अनिवार्यता को खुले रूप से स्वीकार किया है। इस मान्यता का हिन्दू धर्म पर भी गहरा प्रभाव पड़ा है। जैन धर्म के २४ तीर्थंकरों के अनसार हिन्दू धर्म ने भी २४ अवतार माने हैं। तीर्थंकरों द्वारा तीर्थस्थापना के उद्देश्य के अनुसार अवतारों द्वारा भी गीता के अनुसार 'धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे-युगे'—धर्म संस्थापन की ही कल्पना की गयी है। अवतारों में वामन, परशुराम आदि ब्राह्मण अवतार हैं किन्तु ब्राह्मणों द्वारा भी मन्दिरों में पूजा क्षत्रियकुल में उत्पन्न अवतारों की ही करवायी गयी है। यह जैनधर्म की इस मान्यता का हिन्दूधर्म पर प्रत्यक्ष प्रभाव दिखायी पड़ता है। वैसे उपनिषदों ने तो 'नायमात्मा बलहीनेन लभ्य' कहकर अध्यात्मक्षेत्र में प्रवेश करने वाले प्रत्येक मुमुक्षु पर यह अनिवार्यता कर दी है। महावीर स्वामी के निर्वाण के बाद १२ वर्ष तक गौतम स्वामी के जीवित रहने पर भी श्वेताम्बरों का सुधर्मा स्वामी को पट्टधर मानने का भी यही कारण था कि सुधर्मा स्वामी क्षत्रिय कुल में जन्मे थे। आज भी श्वेताम्बर समाज में आचार्य पदवी प्रायः उसी को दी जाती है जो मूल में क्षत्रिय कुल का हो। अस्तु।

दक्षिण देश कर्णाटक में जैनधर्मावलम्बी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य आदि सब ही वर्णों में मिलेंगे पर उत्तर भारत और पश्चिम में जैनधर्म वैश्य वर्ग तक ही सीमित हो गया है। पर ये मूल में सब ही क्षत्रिय कुल के हैं। उत्तर भारत, मध्यभारत, राजस्थान और गुजरात के क्षत्रियों की मुख्य शाखाएँ निम्न मानी गयी हैं—

(१) गहलोत—सिसोदिया, (२) राठौड़, (३) चौहान, (४) परमार, (५) झाला, (६) सोलंखी आदि। आज जैनी क्षत्रियों की उपरोक्त मूल शाखाओं के ज्यों के त्यों इसी रूप में पाये जाते हैं। यही नहीं, इनकी उपशाखाओं याने इनसे निकली हुई खांपें जो नीचे दी जाती हैं उनमें भी वे उसी खांप व गोत्र से जाने जाते हैं। क्षत्रिय कुलों

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

से कई उपशाखाएँ निकलीं किन्तु यहाँ हम उन्हीं शाखाओं या खांपों को दे रहे हैं जो आज जैनियों के भी गोत्र हैं। आज भी जैनियों के शादी विवाह के वे ही रस्म-रिवाज हैं जो क्षत्रिय कुलों के हैं।

गहलोत—सिसोदिया, पीपाडा, भटेवरा ओड़लिया, पालरा (पालावत), कुचेरा, डामलिया, गोधा, मांगलिया, मोड हूल, स्वरूपरिया, चितौड़ा, आहाडा, राणा, भाणावत, गोभिल।

राठोड़—डांगी, माण्डौत, कोटडिया, भदावत, पौरवरणा।
चौहान—मादरेचा, हाडा, वागरेचा, बडेर, चंडालिया, गेमावत, जालौरी, सामर।
परमार—सांखला, छाहड़, हुमड़, काला, चौरडिया, गेहलडा, पिथलिया।
पडिहार—बापणा, चौपड़ा।
झाला—मकवाना।
नाग—टांक या टाक
कछवाह—गोगावत
सोलंखी—सोजतिया, खेराड़ा, भूहड़
यादव—पुंगलिया

राजपूतों की पूरी खांपों का इतिहास अभी तक प्रगट नहीं हुआ है वरना और भी गोत्रों का पता चल सकता है। राजपूतों में भी कई गोत्र स्थानवाचक हैं, जैसे सिसोदिया, अहाड़ा, पीपाड़ा, भटेवरा आदि; इसी प्रकार जैन जातियों में भी अधिकांश स्थानवाचक व पेशे व पद के सूचक हैं। जो यहाँ दिये जा रहे हैं—

स्थानवाचक—सिसोदिया, भटेवरा, पीपाड़ा, अहाड़ा (अहाड़ से), मारु (मारवाड़ से), ओस्तवाल व ओसवाल (ओसियां से), देवपुरा, डूंगरपुरिया, जावरिया, चित्तौड़ा, सींगटवाडिया, नरसिंहपुरा, जालोरी, सिरोया, खींवसरा, पालीवाल, श्रीमाल, कंठालिया, डूँगरवाल, पोरवाल, कर्णावट, गलूँडिया, कछारा (कच्छ) से, डांगी, (डांग से), गोडवाडा।

व्यापार सूचक—जौहरी, सोनी, हिरन (सोने का व्यापार करनेवाला, सोनी जेवरों में) लुणिया, बोहरा (बौरगत), गांधी, तिलेसरा, कपासी, विनोलिया, संचेती (थोकमाल का व्यापारी), भण्डशाली (पहले गोदामों में माल भाण्डों में रखा जाता था), रांका (ऊन के व्यापारी), दोशी (कपड़े का व्यापारी), पटवा, बया (तोलने वाला)।

पद वाचक—पगारिया (वेतन चुकाने वाला), वोथरा—बोहित्थरा (जहाज से माल मँगाने वाला) हिलोत (सेलहत्थ—भाला रखने वाले), महता (लेखन का काम करने वाला या राणियों के कामदार), चौधरी, कोठारी, भण्डारी, खंजाची, बेताला (खानों पर काम कराने वाला), नानावटी, कावेडिया (कवडिये सिक्के के व्यापारी,), गन्ना, मंत्री, सिंघवी, सेठिया, साहु (शाह), खेतपालिया, वेद, नाहरा, साहनी (घोड़ों का अफसर), छाजेड़।

सिन्ध से आये हुए—ललवानी, सोमानी, छजलानी, चोखानी, सोगानी।

उपरोक्त जो भी कुछ गोत्र दिये गये हैं वे सब मध्यपूर्व व मध्य युग में जैनाचार्यों द्वारा जैन धर्म में जिन क्षत्रियों को दीक्षित किया गया था उन्हीं के हैं। अब हम उन गोत्रों पर प्रकाश डालेंगे जो महावीर काल में या उनके पीछे जैन ग्रन्थों में पाये जाते हैं और इतिहास के अन्धकार में उनके उत्पत्ति के सम्बन्ध में कई मनगढ़न्त कथाएँ प्रचलित कर दी गयी हैं।

दोशी को दोषी बताते हुए जैन जाति का अन्तिम परिवर्तित गोत्र मानकर इसकी खिल्ली उड़ाते हुए कहा जाता है कि 'और भी कोई होसी'। यह बहुत ही प्राचीन जाति है जो सूत और रेशम के वस्त्रों का व्यापार करती थी। जो ब्राह्मण व्यापारी हो गये हैं उनमें भी आज दोशी गोत्र हैं। भगवान् महावीर की दीक्षा के समय जो शरीर पर वस्त्र था वह दुष्य ही था। उसके व्यापार करने वाले को दोशी कहा गया था। शत्रुंजय का अन्तिम

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org

उद्धार कराने वाला कर्माशाह दोशी था जो देश के कपड़े के बड़े व्यापारियों में था। उसके यहाँ चीन से रेशमी वस्त्र जहाजों द्वारा जाता था। वह महाराणा का दीवान भी था किन्तु शिलालेखों में उसे दोशी लिखा गया है।

बोथरा—यह बोहित्थ से बना है जिसका संस्कृत भाषा में अर्थ जहाज होता है। मेवाड़ में बोथरा को बोहित्थरा कहा जाता है। यह शब्द भी प्राचीन काल से चला आ रहा है।

रांका—पाणिनि काल में पंजाब और हिमालय प्रदेश में रंकु नाम की प्रसिद्ध बकरियाँ थीं, जो उनको बेचने आता और जो लेता, अर्थात् जो उनका व्यापार करते वे रांका कहलाते थे। रांका और बांका नाम के दो भाइयों की कथा गढ़कर उनके वंशजों को भी रांका मान लिया गया है।

विस्तार के भय से उपर्युक्त कुछ ही उदाहरण दिये गये हैं। वैसे बहुत सामग्री उपलब्ध है जिससे यह सिद्ध किया जा सकता है कि वर्तमान में जैन जाति पूर्ण रूप से क्षत्रिय है और स्थान, पद और व्यवसाय के नाम से पुकारे जाने के पर भी यह पता लगाना असम्भव नहीं हैं।

□□□□

Jain Education International For Private & Personal Use Only www.jainelibrary.org